जो ग्रह अनुकूल नहीं है–प्रतिकूल चल रहे हैं या भविष्य में अनिष्टकारी बनने वाले हैं तो उसी ग्रह के रंग के साथ महामंत्र के उस पद्य का जप-ध्यान पूजा पूर्ण विधि विधान से चालु किया जाए तो निश्चित ही उसमें सुधार होगा, उन कर्म पुद्गलों का क्षय होगा। मैं एक ही ग्रह का पूर्ण विधान बता रहा हूँ–ताकि निबन्ध लम्बा न हो जावे। जैसे सूर्य की दशा चल रही है वो अनिष्टकारी है तो उसके लिए बताया गया है:–

मंत्र - ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं।

जप - ११००

मंत्र - ऊं ह्रीं पद्मप्रभवे नमस्तुभ्यं मम शान्तिः शान्तिः

जप - एक माला रोज।

उपासना - भगवान पद्मप्रभु के अधिष्ठायक देव कुसुम की पूजा।

दिशा - उत्तर या पूर्व। निद्रा के समय भी मस्तक पूर्व की ओर रहना चाहिए या दक्षिण की ओर।

रंग प्रयोग - वस्त्र, आसन व माला का रंग लाल-जप व पूजा के समय

स्नान - कनेर, दुपहिरिया, नागरमोथा, देव दार, मैनसिल, केसर, इलायची, पदमाख, महुआ के फूल और सुगन्धि वाला के चूर्ण को पानी में डाल कर स्नान करें।

व्रत - ३० रविवार के तीस व्रत करें लगातार।

धारण - रत्न-माणिक्य, वनस्पति-बिल्वपत्र की मूल, अंगूठी-ताँबा की, रत्न या मूल चांदी में जड़वा कर रविवार को मध्याह्न में ऊं ह्रीं ह्रीं सः सूर्याय स्वाहा।

इस मंत्र की एक माला उस पर जप कर अनामिका अंगुली में या भुजा में धारण कर लें।

दान - सोना, मुंगा, ताँबा, गेहूँ, घृत, गुड़, लाल कपड़ा, लालचन्दन, रक्तपुष्प व केशर।

समय - सूर्योदय काल।

यंत्र :

६	१	८
७	५	३
२	९	४

धारण विधि-रविवार के दिन अष्टगंध स्याही, अनार की कलम से भोजपत्र पर लिखकर ताँबा, चांदी या सोने के मादलिये में डालकर-लाल डोरे में पिरोकर पुरुष दाहिनी भुजा व स्त्री गले में धारण कर लें।

इस तरह प्रत्येक ग्रह के अलग-अलग विधान बताए गए हैं।

पता :
जे. पी. काम्पलेक्स शाप नं. ८
डोर नं. ८-२४-२६, मेन रोड
पो. राजमुंदरी-५३३१०१ (आ.प्र.)

हाँ, मैं जैन हूँ

–श्री परिपूर्णानन्द वर्मा

धुरन्धर साहित्यकार तथा विद्वान लोग मुझसे प्रायः पूछ बैठते हैं कि मैं आध्यात्मिक सभाओं में अपने को जैनी क्यों कहता हूँ जबकि मैं अपने को कट्टर सनातन धर्मी, घोर दकियानूसी हिन्दू तथा श्राद्ध, तर्पणा, पिण्डदान तक में विश्वास करने वाला भी कहता हूँ। मेरा उनसे यहाँ निवेदन है कि मैं वह जैनी नहीं हूँ जो अपने नाम के आगे तो जैन लिखते हैं पर घोर कुकर्मी, मद्य-माँस सेवी तथा रोजमर्रा के जीवन में छल कपट करते रहते हैं। जब मैं श्रद्धापूर्वक भगवान महावीर या पार्श्वनाथ वीतराग की प्रतिमा के सम्मुख नतमस्तक होकर उनसे यही चाहता हूँ कि उनके दर्शन से मैं भी वीतराग, माया मोह बन्धन से छूट जाऊँ तो मुझे दया भी आती है इन मूर्खों पर जो वीतराग से सांसारिक पदार्थ या सुख माँगने जाते हैं। मुझे उन करोड़ों हिन्दू नर-नारी की मूर्खता तथा अज्ञान पर रुलाई आती है सर्व अन्तर्यामी देवी-देवताओं से कुछ माँगते हैं–हमें यह दे दो, वह दे दो। मानो वह देव न तो अन्तर्यामी है, हमें जानता-पहचानता है. वह सो रहा है और हम उसे जगाकर अपनी आवश्कयता बतला रहे हैं। हमारे धर्म शास्त्र बार-बार निष्काम कर्म का उपदेश देते हैं पर कौन हिन्दू उसे मानता है। कब्र पर फातिव पढ़ने वाला मुसलमान या गिर्जाघर में ईसाई यह क्यों भूल जाता कि ईश्वर सर्वज्ञ है तभी तो उपास्य है। हमने एक प्रभु सत्ता तथा सार्व भौम शक्ति मानकर अपना काम हल्का कर लिया कि एक कोई सर्व शक्ति हैं जिसका सहारा है। इसलिए ईश्वरवादी होना तो सरल है पर जैन मत पर चलने वाला जो एक परम तत्व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ईश्वर (जगत्कर्ता) की सत्ता में विश्वास नहीं करता और फिर भी अध्यात्म के, जीवन के रहस्य के परम शिखर पर पहुँच गया है, वह कितना महान् तथा आज के ही नहीं, अनन्त काल से पूजनीय तथा अनुकरणीय न हो, यह कितने दुःख तथा आश्चर्य की बात है।

हम वेद को अपौरुषेय मानते हैं। उसकी बात करने की हम में शक्ति नहीं है। पर उनमें भी ऋषभ अरिष्टनेमि आदि की सत्ता है। उपनिषदों से लेकर चलिये तो आवश्यकता पड़ेगी यह जानने की असली तत्व धर्म का क्या है। जिसे लोग 'धर्म' नाम से पुकारते हैं वह तो केवल एक शाब्दिक विडम्बना है। धर्म का अर्थ न अंग्रेजी शब्द "रेलिजन" है और न मुसलिम शब्द "मजहब" है। हमारा समूचा धर्मशास्त्र केवल "कर्त्तव्य शास्त्र" है। हमारे किसी धर्म शास्त्र ने धर्म की व्याख्या नहीं की है। यह करो, वह करो, यह न करो, वह न करो, यह तो बार-बार मिलता है पर यह वहाँ कहाँ लिखा है कि यही करना धर्म है। यदि कहीं इतना स्पष्ट होता है तो महाभारत में यक्ष ने युधिष्ठिर से पूछा था कि धर्म क्या है तो वे यह उत्तर न देते–

धर्मस्य तत्वं निहितं गुहायाम्
महाजनो येन गतः स पन्था।

धर्म का तत्व बड़ा गूढ़ है। जिस मार्ग से महापुरुष चलें, उसी मार्ग से चलना धर्म है। महापुरुष किसे कहते हैं, किस महापुरुष के बतलाये मार्ग से चलें, इसका उत्तर कौन देगा। "फिलासफी" नाम की चीज हमारे हिन्दू-बौद्ध-जैन किसी मत में नहीं है। पश्चिम के "फिलासफर" तर्क से अपने सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं। हमारे देश में "दर्शन" है, दर्शन शास्त्र है यानी हमारे ऋषि, मुनि, भगवान तीर्थंकर या भगवान बुद्ध ने जो देखा, अपनी तपस्या से जो अनुभव किया, दर्शन किया–वह तर्क से नहीं, अनुभव से बना दर्शनशास्त्र है। चूँकि दर्शन के आधार पर हमारे अध्यात्म की भित्ति खड़ी हुई है इसीलिए आज तक हमारे अध्यात्म शास्त्र की भित्ति पर एक से एक बढ़कर महान् शास्त्र की रचना होती जा रही है। कोई किसी मार्ग को पकड़ लेता है, कोई किसी को। आखिर हिन्दू धर्म में न्याय शास्त्र है, तर्क शास्त्र है, कपिल हैं, कणाद हैं, वैदान्तिक हैं, सांख्य हैं, और "जब तक जीये सुख से जीये, भस्म होने वाला शरीर फिर कहाँ मिलेगा" कहने वाले चार्वाक् ऋषि भी हैं। इतने मत मतान्तरों में उलझा है हिन्दू धर्म कि पिछले एक हजार वर्ष में पुराणों में संवर्धन, संशोधन तथा मिलावट करके उनकी गरिमा तक नष्ट कर दी गयी है। आज के युग में हमारे महान पुराणों की दुर्गति करने वाले भी कम नहीं हैं।

मतभेद क्या है

मुक्त, स्वयंसिद्ध विभूति आकर उपदेश देकर चल देते हैं। यह उनके अनुयायियों का काम है कि उनके कथन को अपनी सूझ-बूझ तथा तपस्या के अनुसार व्याख्या कर हमें सम्बोधित करते रहें। भगवान महावीर के कोई मतावलम्बी न थे न सम्प्रदाय वाले। दिगम्बर, श्वेताम्बर, न मूर्तिपूजा विरोधी स्थानकवासी अथवा उग्र सुधारक तेरापंथी। पार्श्वनाथ के चार महाव्रतों में ब्रह्मचर्य को मिलाकर जो पाँच महाव्रत दिये हैं, ऐसा कौन हिन्दू है जो अपने को हिन्दू कहता हो और उनको न माने–अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य। इन महान् तथ्यों में से एक को पकड़ ले तो अन्य चार आप से आप सध जायेंगे। वैदिक कथन भी तो है कि केवल ब्रह्मचर्य के व्रत से देवताओं ने मृत्यु को जीत लिया।

ब्रह्मचर्येण देवा तपसा मृत्युमुपाघ्नत।

इन पाँच तत्वों या मूलमंत्र को मानने तथा जीवन में उतारने के लिए ही जैन धर्म ने विशद आचार संहिता का निर्माण किया है और आज तक इस संहिता की व्याख्या तथा जीवन में उतारने की शिक्षा बराबर मिल रही है। हिन्दू कहता है कि जब तक कर्म का बंधन नहीं टूटेगा, आत्मा की मुक्ति न होगी, जन्म तथा मरण का ताँता लगा रहेगा। यह बंधन समाप्त हुआ और आत्मा मुक्त होकर परब्रह्म में विलीन हो जायगा। हिन्दू धर्म का एक पक्ष सृष्टि के हरेक पदार्थ में चैतन्य का वास मानते हैं। जैन मत के अनुसार विश्व दो पदार्थों में विभाजित है–जीव सनातन है, अजीव जड़ है–पर दोनों ही अज अमर और अक्षर हैं। जीवधारी पुद्गल (प्रकृति), धर्म यानी गति, अधर्म यानी अगति या लय, देश (आकाश) और काल यानी समय से बँधे हुए हैं। इसी पाँच तत्व के बीच जैन धर्म का महान् स्याद्वाद है। जैसे हम 'नेति नेति' परब्रह्म के लिए कहते हैं कि वह यह भी है, नहीं भी है या न वह है, न यह वह है–स्याद्वाद इस स्थिति को मेरे विचार से और भी स्पष्ट कर देता है–जिस दृष्टि से देखिये वैसा ही दिखेगा–यह मेरा अपना इसका अर्थ है, चाहे वह घट के रूप में हो या ब्रह्म के रूप में। हमारे लिये मोक्ष का अर्थ है परब्रह्म में उसी का अंश आत्मा का लय हो जाना। ब्रह्म न जड़ है, न चेतन। वह तो नपुंसकं इदम् ब्रह्म नपुंसक लिंग है। बौद्ध का जीव निर्वाण को प्राप्त करता है। दीपक बुझ जाता है। पर जैन धर्म में जीव परम आनन्द की स्थिति में पहुँच जाता है, कैवल्य प्राप्त कर। सोचने-समझने से यह स्थिति बड़ी आकर्षक लगती है। वस्तु स्थिति क्या है यह कोई अनुभवी हो तो बतलाये। हम तो केवल जो सुनते हैं, हमारे उपदेशक जो कहते हैं, वही जानते हैं। अन्यथा बाबा कबीरदास न कह जाते–

उतते कोइ न आइया जासे पूछूँ धाय।
इतते सब कोई जात हैं मार तदाम तदाम॥

ऐसा कौन हिन्दू है जो अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य से परे कोई कर्म मानता हो। ब्रह्मचर्य का बड़ा व्यापक अर्थ है। अपनी स्त्री से सन्तुष्ट रहना ही ब्रह्मचर्य नहीं है। छात्र जीवन में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ब्रह्मचर्य रखना ही यह व्रत नहीं है। इसका अर्थ तो है ज्ञान की प्राप्ति का आचरण।

ब्रह्मणे वेदार्थ चर्यम् आचरणयिम्

मनसा वाचा कर्मणा किसी को दुःख न पहुँचाना अहिंसा है। हिन्दू धर्म का तत्व भी यही है। "पुराणों का निचोड़ व्यास कहते हैं कि बस दो ही बात हैं–परोपकार करना पुण्य है तथा दूसरे का अपकार करना ही पाप है।

परोपकारः पुण्याय पापाय परपीड़नम्

घण्टों मंदिर में नाक दबाये बैठे रहें और घर आकर हर तरह के जाल, फरेब रचने वाला कभी संसार से मुक्ति नहीं पा सकता। जीवन भर मरता, जन्म लेता, मरता–कभी नीचतम घर में जन्म लेता, हर प्रकार का कष्ट उठाता रहेगा। असली चीज है आवागमन के बंधन से मुक्ति पाना। महान् पण्डित, शास्त्रज्ञ, विद्वान हो जाने से काम नहीं चलेगा–यदि वह व्यक्ति अपने मन की गति नहीं जानता, जिसे अपनी वास्तविक आकांक्षा इच्छा तथा भावना का न बोध हो, न बोध के प्रति सम्मान भी, ऐसा व्यक्ति जिसका भी हाथ पकड़ेगा, उसे लेकर स्वयं भी डूब जायेगा। बाबा कबीर ने साफ कहा है–

जाना नहिं बूझा नहीं समुझि किया नहिं गौन॥
अंधे को अंधा मिला, राह बतावे कौन॥

संसार में केवल अटल सत्य है और वह है मृत्यु। जो लोग धन तथा सम्पत्ति को ही अपना लक्ष्य बनाये हैं उन्हें जैन धर्म से यह तो सीखना ही चाहिए कि मृत्यु के बाद उनके साथ क्या कुछ जायेगा? विजेता सिकन्दर के निधन के सम्बन्ध में यह कितना कटु सत्य कहा गया है–

लाया था क्या सिकन्दर दुनियाँ से ले चला क्या?
ये हाथ दोनों खाली, बाहर कफन से निकले।

हम जिसे ब्रह्म मानते हैं, जैनी जिसे जीव मानते हैं–वह कौन है, कहाँ है यह तो मुक्त, मोक्ष प्राप्त या तीर्थंकर ही जानते होंगे। हम तो सुनी, सुनायी बात ही कह सकते हैं। यह मृत्यु रोज दिखायी पड़ रही है। ब्रह्मलीन अनन्त श्री स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती ने अपने प्रवचन में कहा था कि–

"अन्तिम निष्कर्ष यह होना चाहिए कि मुझमें अद्वितीय, परिपूर्ण, अविनाशी, प्रत्यक् चैतन्याभिन्न ब्रह्म में न माया है, न छाया, न विद्या, न अविद्या, न व्यष्टि बुद्धि न समष्टि बुद्धि, न मन, न इन्द्रिय, न देह, न विषय। इस प्रक्रिया से विचार करने पर आत्मनिष्ठा सम्पन्न होती है।"

जैनी यदि कहता है कि जीव से पुद्गल छूटा तो जीव परम आनन्द की अपनी पूर्व स्थिति को प्राप्त कर लेता है। इस कथन तथा हमारे सनातनी विश्वास में कोई अन्तर नहीं होता–चाहे ईश्वर की, जीव की या ब्रह्म किसी का कल्पना कीजिये। कल्पना इसलिए कह रहा हूँ कि मैं सांसारिक आदमी क्या जानूँ कि वास्तव में है क्या। हमारे महान् कठोपनिषद् में मृत्यु के देवता यमराज, जो धर्मराज भी हैं, उनका तथा नचिकेता के वार्त्तालाप में मृत्यु की अपरिमेय जो व्याख्या की गयी है वैसी मुझे अन्यत्र नहीं मिलती।

आदि शंकराचार्य ने ब्रह्म सूत्र की व्याख्या में लिखा था

बुद्धावभिव्यक्त विज्ञान प्रकाशनम्

यानी घड़ा, कपड़ा, मकान, दिन, रात, बंधु, बांधव-जो भी कुछ भी है वह केवल दिखायी पड़ने में भिन्न हैं, अन्यथा सब एक मात्र रहते हैं, अविभिन्न है–दृष्टि दोष है–यही तो स्याद्वाद है।

अह्रस्वं, अदीर्घं, अनणुं, अदृश्ये, अनिरक्ते, अनिलयने

संक्षेप में आत्मतत्त्व के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं है। हमारे में जो कुछ है, कामवासना है। यह चली जाय तो फिर अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह भी तथा साथ ही ब्रह्मचर्य भी समाप्त हो जायेगा इसीलिये भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं–

धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ!

यमराज से नचिकेता का तीसरा प्रश्न था कि मनुष्य का शरीर छूटने पर शरीर का नाश हो जाता है। भस्म हो जाता है पर उसमें स्थित चैतन्य जीव (आत्मा) की क्या गति होती है? तो यमराज ने उत्तर दिया था–

योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः।
स्थाणुमन्येऽनुसंयान्ति यथाकर्म यथाश्रुतम्।

(द्वि. ७)

अर्थात् कर्मानुसार तथा ज्ञान के अनुसार जीवात्मा का पुनः जन्म होता है। किस कर्म के अनुसार कौन-सी योनि प्राप्त होती है यह तो इस श्लोक में प्रकट नहीं है पर यह तो ज्ञानी पुरुष ही बतला सकते हैं। संक्षेप में–

एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति

कर्म-संस्कार-जन्म-मरण यह सब रहस्य केवल मुक्त ही स्पष्ट कर सकता है। मैं तो इतना ही जानता हूँ कि अच्छा सनातनी हिन्दू या निर्मल जैनी होने के लिये एक-दूसरे से पूरी तरह परिचित होना नितान्त आवश्यक है। ●●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org